ISSN - 0974-1526

SAṂSKṚTI SANDHĀNA

Volume - XXVIII No. 2 (July-December) 2015

REFERRED JOURNAL

Editor
Dr. Jhinkoo Yadav

Assistant Editor
Dr. Vinod Kumar Yadav

JOURNAL OF THE RESEARCH INSTITUTE OF HUMAN CULTURE, VARANASI

Scanned with CamScanner

विषयानुक्रमणिका

Content

			पृष्ठ सं०
	सम्पादकीय		i-vi
१.	धर्मशास्त्रीय दृष्टि से धर्मस्वरूप, वर्गीकरण तथा साधारण धर्म	पी०डी० सिंह	१-२५
२.	वेदों में पर्यावरण चेतना	लज्जा पन्त (भट्ट), भावना कोठारी	२६-३०
३.	वैदिक धर्म में एकेश्वरवाद	कृष्ण मुरारी, मीना कुमारी	३१-३४
४.	संस्कृति के प्रश्न, समाजवाद और आचार्य नरेन्द्र देव	बृजेश प्रताप सिंह	३५-४२
५.	प्राचीन भारत में दिव्य की अवधारणा	अनिल कुमार उपाध्याय	४३-४७
६.	संस्कृत गद्य परम्परा और दण्डी	संजय कुमार	४८-६२
७.	प्राचीन भारतीय साहित्य में उल्लिखित आयुर्वेदिक सामग्री का ऐतिहासिक अध्ययन (वैदिक काल से १०वीं शती ई.)	राजदेव दूबे	६३-६६
८.	इक्ष्वाकुवंश का इतिहास : पुराणों के विशेष संदर्भ में	अवनीश कुमार सिंह	६७-७१
९.	प्राचीन भारतीय इतिहास में करारोपण व्यवस्था	मनश्याम वर्मा	७२-७६
१०.	भगवान बुद्ध का 'प्रतीत्य समुत्पाद'	चंद्रमा प्रसाद यादव	७७-८०
११.	पंचशील और विश्व शान्ति	योग्यता रानी	८१-८४
१२.	बौद्ध धर्म में संगीति परम्परा	अजय कुमार मिश्र एवं राखी रावत	८५-९०
१३.	अशोक के अभिलेखों का महत्व	रजनी कान्त राय	९१-९४
१४.	बुद्ध कालीन कला में श्रेणियों का अवदान	शैलेन्द्र कुमार मिश्र	९५-१००
१५.	बौद्ध साहित्य में वर्णित कौशाम्बी	महेन्द्र नाथ सिंह	१०१-१०७
१६.	बौद्ध धर्म के उत्तरकालीन कुछ बौद्ध महापुरुष (डॉ० भरत सिंह उपाध्याय के निबन्ध के विशेष सन्दर्भ में)	बुद्ध घोष	१०८-११२
१७.	प्राचीन नगर एरच के विकास में भौगोलिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का योगदान	सुलभ श्रीवास्तव	११३-११६
१८.	कोंकण-इतिहास के झरोखे से	शशि कान्त राय	११७-१२०
१९.	बौद्ध धर्म के प्रसार में नालन्दा के आचार्यों का योगदान	विनोद कुमार यादव, मंजु कश्यप	१२१-१२६
२०.	पूर्व-मध्यकालीन भारतीय इतिहास लेखन की चरित परम्परा	दिनेश कुमार ओझा, राजेश कुमार केसरी	१२७-१३१

Scanned with CamScanner

संस्कृत गद्य परम्परा और दण्डी

संजय कुमार*

गद्य की प्रारम्भिक अवस्था की यदि बात की जाय तो यह सृष्टि के प्रारम्भ से ही इस वसुधातल को आलोकित किये हुए है। मानव अपने कार्य व्यवहार के लिए जिस जुबान का उपयोग करता है, वह प्रायः गद्यमय ही रहा करती है। संस्कृत गद्य काव्य की एक मात्र असाधारण विशेषता यह है कि इसमें लेखक की लेखनी छन्द की अर्गलाओं से सर्वथा मुक्त रहती है। वह छन्दों की जटिलताओं को त्याग कर अपनी प्रतिभा का खुलकर प्रयोग करता है। हमारे कार्य-व्यवहार के लिए जितना सहज गद्य है, उतना सहज पद्य कदापि नहीं हो सकता है। गद्य की सहजता की उत्सभूमि छन्दोमुक्तता है। इस छन्दोमुक्तता के साथ-साथ गद्य काव्य की अन्य विशेषताओं की विद्यमानता ही गद्य गरिमा को प्रमाणित करती है। छन्द का अभाव और छन्द का भाव तो गद्य एवं पद्य दो विधाओं को विभक्त करने के लिए साधन मात्र है। इनके द्वारा गद्य या पद्य की विशेषताओं को नहीं व्यक्त किया जा सकता है। संस्कृत आचार्यों द्वारा गद्य काव्य की जो परिभाषाएँ दी गई हैं, वह भी केवल गद्य के स्वरूप तक ही सीमित है। इस विषय में आचार्य दण्डी गद्य को पद्य से अलग करते हुए उसके गुण पक्ष का केवल स्पर्श करते है। वे भी अन्य आचार्यों के समान गद्य की परिभाषा दिए हैं- 'अपादः **पद सन्तानो गद्यम्**'[१] अर्थात् पादों (छन्दों) से रहित पद समूह को गद्य कहते हैं। अन्तर केवल इतना किये है कि गद्यकाव्य का जो जीवनाधायक तत्त्व है, उसे भी प्रकाशित करने का प्रयास किए हैं-'ओजः **समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्।**'[२] अर्थात् समासों का प्रचुर प्रयोग ओजगुण है, यह गद्य रचना का प्राण है। यहाँ भूयकत्व का अर्थ प्रचुरता अथवा बहुलता है, दीर्घता नहीं, यही दण्डी का गद्य वैशिष्ट्य है। समासों का प्रयोग ये करते हैं, लेकिन उसमें दीर्घता का अभाव दिखाई देता है। गद्य की गाढबन्धता ही गद्य मयता है, जिसके वर्ण अनुचर की भाँति गमन करते हैं। अग्निपुराण में गद्य की परिभाषा दण्डी के समान ही है- 'अपदः **पदसन्तानो गद्यं तदपि गद्यते**'[३] आचार्य विश्वनाथ लिखते है-'वृत्तगन्धोज्झितंगद्यम्'[४] अर्थात् जो छन्दोबद्ध नहीं हुआ करती, वह गद्य है। यद्यपि आचार्य विश्वनाथ गद्य के भेद-उपभेद की चर्चा साहित्यदर्पण में किए है, जिसे आगे दिखाया भी जायेगा, लेकिन गद्यकाव्य की जो मौलिक विशेषताएँ हैं, उस पर ध्यान नहीं दिये है। कहने का अभिप्राय यह है कि गद्य काव्य में भी वाक्यों की मधुरता, सुन्दरता, चमत्कारिता, सहजता, सरसता, रमणीयता और इष्टार्थतता का होना उतना ही आवश्यक है, जितना पद्य काव्य में, बल्कि उससे बढ़कर क्योंकि पद्यकाव्य में व्यञ्जकता, अनुरणनात्मकता और गेयता के द्वारा उसकी पुष्टता का ऐसा भाव उत्पन्न हो जाता है कि उसमें किसी तत्त्व के अभाव का आभास ही नहीं

*सहायक-आचार्य, संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंहगौर विश्वविद्यालय, सागर-(म.प्र.)

Scanned with CamScanner